हिन्दुस्तान

जान है तो टीवी है

टेलीविजन देखने के कई फायदे हैं। उनमें से एक फायदा महान कॉमेडियन ग्राउचो मार्क्स ने बताया है। ग्राउचो मार्क्स कहते हैं, 'मुझे टेलीविजन बहुत ज्ञानवर्द्धक लगता है, क्योंकि जब भी कोई टीवी चलाता है, तो मैं दूसरे कमरे में जाकर कोई किताब पढ़ने लगता हूं।' ऐसे 'फायदे' छोड़ दिए जाएं, तो ऑस्ट्रेलियाई शोधकर्ताओं ने टीवी देखने के बारे में एक खतरे की घंटी बजा दी है। उनका कहना है कि एक घंटा टीवी देखने से जिंदगी के 21.8 मिनट कम हो जाते हैं। इस शोध के मुताबिक, 25 वर्ष से ज्यादा उम्र के जो लोग औसतन छह घंटे रोज टीवी देखते हैं, उनकी जिंदगी लगभग पांच वर्ष कम हो जाती है। ऑस्ट्रेलिया में जीवन शैली से होने वाले रोगों को लेकर कई सालों से शोध हो रहा है, और इसी शोध के आंकड़ों का विश्लेषण करके शोधकर्ता इस नतीजे पर पहुंचे हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि टीवी देखना अपने आप में खतरनाक है, दरअसल देर तक बिना कुछ किए बैठे रहना सेहत पर बुरा असर डालता है। वैज्ञानिक मानते हैं कि बैठे रहना सेहत के लिए उतना ही खराब माना जाना चाहिए, जितना मोटापा या धूम्रपान। उनका एक और निष्कर्ष बहुत महत्वपूर्ण है, अगर आप बहुत देर बैठे रहते हैं, तो व्यायाम भी आपकी सेहत पर होने वाला बुरा असर कम नहीं कर सकता। अक्सर यह देखा गया कि दिन में एक बार व्यायाम करने के बाद लोग यह मान लेते हैं कि उन्होंने सेहत के प्रति अपने कर्तव्य को निभा लिया, अब वे खूब आराम कर सकते हैं। ऐसे में वे व्यायाम के अच्छे फायदों को बराबर कर देते हैं। दरअसल, दिन भर सक्रिय रहना, अपने छोटे-मोटे काम खुद करना सेहत के लिए ज्यादा अच्छा होता है, बनिस्बत एक बार जिम में जाकर व्यायाम करने के। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि बैठे रहने से शरीर की, खासकर पैरों की बड़ी मांसपेशियां निष्क्रिय रहती हैं और इसलिए उनकी ऊर्जा की जरूरत कम हो जाती है। ऐसे में, अतिरिक्त शर्करा खून में इकट्ठा हो जाती है और फिर वह डायबिटीज तथा दूसरे तरह के रोग पैदा करती है।

एक शोध के मुताबिक, एक घंटा टीवी देखने से उम्र के लगभग 22 मिनट कम हो जाते हैं, क्योंकि इससे जीवन शैली संबंधी बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है।

टीवी देखने को इस सर्वेक्षण का हिस्सा इसलिए बनाया गया, क्योंकि यह तय है कि टीवी देखते समय लोग एक जगह बैठे रहते हैं, लेकिन दिन में और भी बहुत काम बैठे-बैठे ही करने होते हैं। जो लोग दफ्तरों में काम करते हैं, वे भी कुरसी पर बैठे रहते हैं, तो इसका भी बुरा असर होता होगा। एक अन्य शोध में टीवी देखने के अलावा भी बैठे रहने के बारे में बताया गया है। इस शोध के मुताबिक आम तौर पर वयस्क लोग दिन का 50 से 70 प्रतिशत वक्त बैठे-बैठे बिताते हैं। इन शोधकर्ताओं के मुताबिक, इतना बैठने से डायबिटीज होने का खतरा 112 प्रतिशत और हृदय रोग का खतरा 147 प्रतिशत बढ़ जाता है। अगर हम इन दो शोधों के नतीजों को जोड़कर देखें, तो पाएंगे कि बैठे रहना कितना नुकसानदेह है। इसका अर्थ यह भी नहीं कि आराम नहीं करना चाहिए। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का यह भी निष्कर्ष है कि अगर शरीर को आराम नहीं मिला, तो उसके नतीजे भी इतने ही बुरे होते हैं, खासकर सही मात्रा में नींद न लेना तमाम बीमारियां पैदा कर सकता है। ऐसे में कोई क्या करे? दरअसल, गतिशीलता और आराम, दोनों जरूरी हैं। लेकिन ऐसा काम न किया जाए, जिसमें व्यायाम भी न हो और थकान हो जाए। अब यह पूरी तरह मुमकिन तो नहीं, आखिर दफ्तर में काम भी करना है और कुछ टीवी देखना भी जरूरी है। ऐसे में, यही हो सकता है कि यथासंभव चलते-फिरते रहें, और जितना हो सके, उतना कम टीवी देखें। हो सकता है कि इससे चैनलों की टीआरपी थोड़ी कम हो जाए, लेकिन अगर ज्यादा जिंदा रहे, तो ज्यादा टीवी देख पाएंगे।

विदेशी अखबार से

पाकिस्तान और तालिबान

पाकिस्तानी तालिबान पर इमरान खान का बयान ज्यादातर तबकों को रिझाने वाला है। उनके मुताबिक, मुल्क में तालिबान की पैदाइश और उसका वजूद किसी न किसी तौर पर 9/11 हमले के बाद पाकिस्तान में अमेरिकी किरदार से जुड़े हैं। इस बयान पर पाकिस्तानी समाज मुगालते में है और विरोधाभास का भी माहौल है। यह भी गौरतलब है कि इस भयंकर खतरे से मुकाबिल होने के वास्ते सत्ताधारी कुलीन तबके के पास कोई सियासी तरकीब नहीं है। पहले पाकिस्तानी तालिबान की हकीकत, उसके असर व उसकी वजह के बीच के रिश्तों को समझिए। यह कहना गलत है कि तालिबान अफगानिस्तान में अमेरिकी दखल की पैदाइश है। हकीकत यह है कि तालिबान 1990 के दशक में अफगानिस्तान में छिड़े गृहयुद्ध की देन है। जब तालिबान ने 1997 में काबुल पर कब्जा जमाया, तब भी इस सीन में अमेरिका नहीं था। वास्तव में, तालिबान ने अमेरिका को उकसाया कि वह मांद में छिपे ओसामा बिन लादेन पर चढ़ाई करे, क्योंकि उसी ने 9/11 के अमेरिकी हमले की जिम्मेदारी ली। यह कहना भी गलत है कि तालिबान अमेरिका के ड्रोन हमलों का नतीजा है और इस हमले से काफी बेगुनाह लोग मारे जा रहे हैं। इस पर यकीन नहीं किया जा सकता कि अगर पाकिस्तान ड्रोन हमलों को रोकने के लिए अमेरिका को राजी कर ले, तो तालिबान दहशतगर्दी बंद कर देगा। सच यह है कि तालिबान 1995 में उभरा और ड्रोन 2004 में। सबसे पहले तालिबान ने ही पाकिस्तानी स्वायत्तता की धज्जियां उड़ाईं। उनके लड़ाकों ने 2001 में फाटा में महफूज पनाहगाह बनाए। यही नहीं, पाकिस्तानी फौज ने तालिबान व अमेरिकी ड्रोन, दोनों को पनाह दी। तालिबान की शिकायत यह नहीं है कि अमेरिकी ड्रोन हमले करते हैं, बल्कि वह यह नहीं चाहता कि पाकिस्तान फौज के हाथ ड्रोन आए और वह इसका इस्तेमाल करे। तालिबान से सुलह की मांग भी कहां तक जायज है? हकीकत में तो 2004 से अब तक तालिबान के साथ चार बड़े और नौ छोटे समझौते हो चुके हैं। हर समझौते में तालिबान का खयाल रखा गया और पाकिस्तान को और कमजोर होने की राह पर धकेल दिया गया।

Friday Times

द फ्राइडे टाइम्स, पाकिस्तान

75 साल पहले

हिन्दुस्तान
Hindustan

स्वतंत्रता में शर्तों की गुंजाइश नहीं

इलाहाबाद, २१ अक्तूबर। राष्ट्रपति पं. जवाहरलाल नेहरू ने निम्न वक्तव्य निकाला है: आल-इण्डिया शिया-कान्फ्रेंस ने जिस स्पष्ट और निश्चित रूप में भारतीय स्वतन्त्रता की लड़ाई में कांग्रेस का साथ देने का निश्चय किया है, उसके लिए उसे मेरी बधाई। राष्ट्रीय पंचायत के संबंध में उसने जो प्रस्ताव पास किया है, वह भी कांग्रेस द्वारा रखे गये प्रस्ताव से मिलता हुआ ही है। इस पर मैं इसलिए खुश नहीं हूं कि उसने कांग्रेस का प्रस्ताव मान लिया, बल्कि मुझे इसकी खुशी है कि उसने साम्प्रदायिक तथा दूसरे खयालात को दूर रखकर इन मसलों पर गौर किया। दृष्टिकोण की यह स्पष्टता शुभ सूचक है। हम लोगों में परस्पर चाहे जितने मतभेद हों, मगर जब हम राजनैतिक और आर्थिक रूप में राष्ट्रीय स्वतन्त्रता पर विचार करें तो उसमें कोई 'अगर' 'मगर' या शर्त नहीं हो सकती। जो लोग उसमें कोई शर्त जोड़ते हैं वे मुख्य उद्देश्य के बनिस्बत उस शर्त की ज्यादा फिक्र करते हैं, जिससे खुद उद्देश्य कम महत्वपूर्ण होकर नगण्य तक बन जाता है।

(उस समय कांग्रेस अध्यक्ष को राष्ट्रपति कहते थे)

22 अक्तूबर , 1937 को प्रकाशित

वैश्विक वित्तीय संस्थाओं की प्रासंगिकता

विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की जरूरत न सिर्फ विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को है, बल्कि अमीर देशों को भी इनका साथ चाहिए।

एन के सिंह
राज्यसभा सदस्य और पूर्व केंद्रीय सचिव

अभी हाल ही में 'ब्रेटन वूड्स' संस्थाओं की सालाना बैठक टोक्यो में संपन्न हुई है। ब्रेटन वूड्स नाम दरअसल विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के लिए प्रचलित है। दूसरे विश्व युद्ध के बाद 1945 में अमेरिका के ब्रेटन वूड्स में इन दोनों संगठनों की नींव रखी गई थी। इन दोनों वित्तीय संस्थाओं यानी विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की पहली व बुनियादी जिम्मेदारी दुनिया की वित्तीय व्यवस्था में स्थिरता सुनिश्चित करने की है।

डी. श्रीनिवास

वर्ल्ड बैंक को शुरुआत में इंटरनेशनल बैंक फॉर रिकंस्ट्रक्शन ऐंड डेवलपमेंट (आईआरडीपी) के नाम से जाना जाता था, जिसका मुख्य काम विश्व युद्ध में ध्वस्त हुए यूरोप व दुनिया के अन्य हिस्सों के पुनर्निर्माण के लिए पूंजी की व्यवस्था करना था। जहां तक आईएमएफ का सवाल है, तो यह मुख्यतः एक निगरानी संस्था है। इसकी सालाना आर्थिक रिपोर्ट वैश्विक आर्थिक वाचडॉग का काम करती है, और जिससे दुनिया भर की अर्थव्यवस्थाओं के प्रदर्शन के बारे में पता चलता है। पिछले वर्षों में इन दोनों संस्थाओं की भूमिका काफी बढ़ी। यूरोप ने समृद्धि की नई ऊंचाई को स्पर्श किया है। जहां विश्व युद्ध के समय उसकी प्रति व्यक्ति आय 4,000 डॉलर थी, वह आज बढ़कर 35,000 डॉलर प्रति व्यक्ति हो गई है। इसी तरह, अमेरिका की प्रति व्यक्ति आमदनी भी इस अवधि में 6,000 डॉलर से बढ़कर 42,000 डॉलर पर पहुंच गई है।

इसलिए वर्ल्ड बैंक ने विकासशील अर्थव्यवस्थाओं की तरफ लगातार अपना ध्यान केंद्रित किया है, जिन्हें अनुदान के समतुल्य सॉफ्ट लोन और दीर्घकालिक कर्जों की काफी आवश्यकता है। नब्बे के दशक में मजबूत विकास दर के साथ उभरते बाजारों को उनकी संभावनाओं के साथ आंका गया और उन्हें 'एशियन टाइगर' कहा गया। एक दशक से अधिक समय तक चीन की आर्थिक विकास दर 10 फीसदी से ऊपर रही। भारत ने हालांकि देर से शुरुआत की, लेकिन 1991 के बाद के आर्थिक सुधारों की बदौलत उसने औसतन 7.2 प्रतिशत की विकास दर को हासिल किया और इसके कारण देश में गरीबी एवं विकास के अन्य संकेतकों में नाटकीय परिवर्तन देखने को मिला है।

पिछले करीब 15 वर्षों से विश्व बैंक ने अफ्रीकी अर्थव्यवस्था पर भी फोकस किया। उसकी प्रशासनिक हालत की तरह आर्थिक स्थिति भी बेहद जर्जर हालत में पहुंच चुकी थी। लेकिन पिछले पांच वर्षों में कई अफ्रीकी मुल्कों ने शानदार विकास का प्रदर्शन किया है, खासकर इथियोपिया, मोजांबिक, नाइजीरिया और दक्षिण अफ्रीका। इसलिए अंतरराष्ट्रीय वित्तीय व्यवस्था में सुधार के अलावा भारत जैसे देशों के लिए विश्व बैंक की भूमिका पर नए सिरे से गौर करने की जरूरत है। विश्व अर्थव्यवस्था में काफी कुछ बदलाव देखने को मिल रहा है, लेकिन आम धारणा यही है कि उभरते बाजारों, खासकर चीन को इन दोनों संगठनों में समुचित भूमिका नहीं दी जा रही है, जबकि सिमटते योगदान के बावजूद इन वित्तीय संस्थाओं के प्रबंधन में यूरोप के पास न सिर्फ अधिक सीटें हैं, बल्कि उसका ऋण कोटा भी अधिक है।

बहरहाल, टोक्यो में संपन्न आईएमएफ और वर्ल्ड बैंक की सालाना बैठक में उन मुद्दों पर गौर किया गया, जो आज दुनिया भर में चिंता का विषय बने हुए हैं। इस बैठक के निष्कर्षों में सबसे महत्वपूर्ण यह है कि वैश्विक विकास दर के पूर्वानुमान में कटौती करते हुए चालू वित्त वर्ष में इसके महज 3.3 प्रतिशत तक रहने का नया अनुमान पेश किया गया है, जबकि अमेरिकी अर्थव्यवस्था में गिरावट के साथ उसकी विकास दर 1.5 प्रतिशत, यूरोप की 0.4 फीसदी और जापान की 2.2 प्रतिशत आंकी गई है। जहां तक उभरती अर्थव्यवस्थाओं का प्रश्न है, तो उनके पूर्वानुमानों में भी गिरावट दर्ज की गई। चीन की विकास दर 8.5 फीसदी से घटाकर 7.8 प्रतिशत तथा भारत की आर्थिक तरक्की की दर 5.8 प्रतिशत से कम करके 4.9 फीसदी आंकी गई।

इस बैठक में जो मुख्य सिफारिशें की गईं, उनमें आर्थिक विकास में नई जान फूंकने के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने पर बल के अलावा सहस्राब्दी विकास लक्ष्य हासिल करने, खाद्यान्न की कीमतों में उतार-चढ़ाव को देखते हुए खाद्य सुरक्षा मुहैया कराने, लैंगिक समानता के जरिये आर्थिक विकास सुनिश्चित करने और रियो की बैठक में हुई चर्चा के आधार पर ठोस विकास पर बल महत्वपूर्ण हैं।

लेकिन सबसे बड़ा सवाल ब्रेटन वूड्स संस्थाओं के भविष्य को लेकर उठ रहे हैं कि क्या ये दोनों संस्थाएं वैश्विक रूप से प्रासंगिक रह पाएंगी? मेरी राय में वे निम्न कारणों से महत्वपूर्ण बनी रहेंगी।

एक, वर्षों के अभूतपूर्व वैश्विक आर्थिक विकास से दुनिया भर में ठहराव की स्थिति पैदा हो गई थी और इससे उसमें आत्मसंतोष का भाव भर गया था। लेकिन वैश्विक मंदी और यूरो संकट ने हमें जोरदार झटके के साथ जगाया है। ये दोनों वित्तीय संगठन सिर्फ गरीब देशों के लिए नहीं हैं, बल्कि अमीर देशों को भी इनकी जरूरत है। ग्रीस, स्पेन और आयरलैंड को चीन व भारत से कहीं ज्यादा इनकी आवश्यकता है। फिर दुनिया में दूसरी ऐसी कोई वित्तीय संस्था नहीं है, जो गरीब और अमीर देश के बीच पूंजी का व्यवस्थित प्रबंधन कर सके।

दूसरा, ताजा आर्थिक एपिसोड ने यह साबित किया है कि जो देश समूह में मिल-जुलकर काम करते हैं, संकट से बाहर निकलने की उनकी संभावना अकेले चलने वाले देश की बनिस्बत अधिक होती है। ये दोनों संगठन सामूहिक पहल में मददगार हैं।

तीसरा, भारत जैसे उभरते बाजारों के लिए, जिन्हें गरीबी उन्मूलन, इंफ्रास्ट्रक्चर, मानव विकास के लिए अभी लंबा सफर तय करना है, ये संस्थाएं सबसे बेहतर मददगार हैं। वर्ल्ड बैंक अपनी थ्री-ए रेटिंग को दीर्घकालिक कर्जों से उठा सकता है, जिसकी भारत को जरूरत है और यह बाजार के किसी भी अन्य स्रोत से कर्ज लेने की बजाय कहीं अधिक मुफीद है। इसी तरह, आईडीए के कोष भी शिक्षा और स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों के ऋण के लिए अधिक आकर्षक स्रोत हैं।

और अंत में, वर्ल्ड बैंक और आईएमएफ में गहरे व व्यापक सुधार की आवश्यकता है। इन संस्थाओं को अधिक उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिए यह बेहद जरूरी है कि अंतरराष्ट्रीय वित्त व्यवस्था का एक नया शिल्प गढ़ा जाए, जो मौजूदा आर्थिक वास्तविकताओं का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हो।

दुनिया को वर्ल्ड बैंक और आईएमएफ, दोनों चाहिए और इन संगठनों को नई दुनिया की चुनौतियों के मुकाबले के लिए तत्पर रहना चाहिए, क्योंकि ये चुनौतियां अब कहीं ज्यादा जटिल हो चुकी हैं।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

नश्तर

लुप्त होती गौरैया, गायब होता गरीब

सरकार को इंसानों में रईस और जानवरों में शेरों की ही चिंता है।

'ग' वर्णमाला का मामूली अक्षर है। मामूली यों कि इससे शुरू होने वाले गधे, गौरैया व गरीब, तीनों शहरी समाज से गायब होने को हैं। महानगर में नदी है, धोबी-घाट भी है, पर बस गधे नहीं हैं। घाट का धोबी हमें ज्ञान देता है, 'गधे पर लादी लादकर जग-हंसाई कौन करवाए? महंगाई इतनी है कि खुद खाएं कि उसे खिलाएं। कपड़े अब हम साइकिल पर लाते और ले जाते हैं। न कोई अब हम पर हंसता है, न साइकिल के पीछे रखी गठरी पर। उन्हें क्या पता कि उसमें क्या है?'

गौरैया पर्यावरण प्रदूषण, कीटनाशक केमिकल व बहुमंजिली इमारतों के बीच कब तक बचतीं? घरों में न आंगन हैं, न आले, न रोशनदान। पीने को न शुद्ध पानी है, न गेहूं का दाना। आदमी बोतलबंद पानी से गुजारा करता है या आटे की थैली पर। गौरैया इस ईंट-पत्थर की नगरी में घोंसला बनाए, तो बनाए कहां और खाए, तो खाए क्या? ऐसे भी गौरैया घरेलू पंछी है। घरों मे अपने भी आज अजनबी हैं। उनके बीच रहे, तो कैसे रहे गौरैया! सरकार को इंसानों में रईस और जानवरों में शेरों की चिंता है। कहने को आम आदमी हर दल का चहेता है। वह सत्ता झटकने का अनिवार्य संसाधन जो है। वोट के बाद नेताओं के लिए उसकी हैसियत आधुनिक समाज में हम दो, हमारे दो के परिवार के उस बुजुर्ग की है, जो परंपरा द्वारा लादा व्यर्थ का भार है। आम आदमी भी आबादी बढ़ाने वाली एक फिजूल व अनुत्पादक शै है। इसे ऊपर उठाने के लिए सरकारों ने क्या-क्या नहीं किया है? कागजी योजनाएं चलाई हैं, विकेंद्रीकरण के नाम पर चुनावी भ्रष्टाचार गांव-गांव पहुंचाया है।

एक ओर गरीबी हटाने के आकर्षक आंकड़े पेश किए गए हैं, वहीं असलियत में महंगाई के जरिये मुंह का कौर छीना गया है। आम आदमी आधा पेट खाता है। बीमार रहता है। न उसके पास डॉक्टर की सुविधा है, न दवा की। कोई देखे, तो हैरत करे। फिर भी वह जिंदा है। गजब की नहीं, भयंकर किस्म की जिजीविषा है उसकी। विकास की गंगा की स्थायी गंदगी है वह। गरीबी तो कब ही हट जाती, अगर कमबख्त गरीब अंगद के पांव-सा न टिका रहता। यों थोड़ी उम्मीद है। विकास की बस्ती में गौरैया अब गुम होने को है, समृद्धि के दौर में गरीब कब तक बचेगा!

गरीबी तो कब की हट चुकी होती, अगर कमबख्त गरीब अंगद के पांव-सा टिका न रहता।

गोपाल चतुर्वेदी

नजरिया

साहस के हथियार से घरेलू हिंसा का मुकाबला

राजधानी में पीसीआर के कॉल आंकड़े बताते हैं कि औरतें घरेलू हिंसा का प्रतिरोध करने लगी हैं।

ऋतु सारस्वत
समाजशास्त्री

देश की राजधानी में घरेलू हिंसा का ग्राफ किस तेजी से बढ़ रहा है, यह पीसीआर में महिलाओं की आने वाली कॉल से पता चलता है। पीसीआर में एक जनवरी से 15 सितंबर 2012 के बीच सबसे ज्यादा कॉल महिलाओं के साथ मारपीट से संबंधित थी, जो उनके साथ घर के भीतर की गई थी। देश का ऐसा कोई कोना नहीं है कि जहां महिलाएं घर के भीतर हिंसा मुक्त वातावरण में सांस ले रही हैं। परंतु पीसीआर के आंकड़े एक सुखद बदलाव की ओर भी इशारा कर रहे हैं कि घरेलू मसला कहकर हिंसा को बर्दाश्त करने की मनोवृत्ति में आंशिक ही सही, पर परिवर्तन आ रहा है। परंतु क्या 'घरेलू हिंसा' जैसे संवेदनशील मुद्दों को सुलझाने की गंभीरता प्रशासन में है?

महिलाओं के उत्पीड़न की बड़ी त्रासदी यह है कि उनके प्रति हिंसा में बाहरी तत्वों से कहीं अधिक परिवार या निकटतम संबंधी जिम्मेदार होते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने महिलाओं के प्रति हो रही वैश्विक हिंसा पर एक रिपोर्ट जारी करते हुए बताया कि बांग्लादेश, तंजानिया जैसे देशों में जहां 50 प्रतिशत से अधिक महिलाएं शारीरिक या यौन उत्पीड़न का शिकार होती हैं, वहीं अमेरिका में इसका प्रतिशत 22 व इंग्लैंड में 30 है। भारत में विवाहित महिलाओं के एक बड़े हिस्से (37 प्रतिशत) को अपने जीवन में कभी न कभी अपने पतियों की यौन हिंसा का शिकार बनना पड़ता है। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष की एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 15 से 49 वर्ष की आयु की लगभग दो-तिहाई विवाहित महिलाएं हिंसा का शिकार होती हैं, इसमें पिटाई, दुष्कर्म एवं यौन प्रताड़ना शामिल हैं।

महिलाओं के साथ हो रही हिंसा के पीछे मूल कारण अहंकार है, जो कि हर कीमत पर स्त्री को अपने वर्चस्व में रखना चाहता है और इसका सीधा-सा रास्ता है, महिलाओं को शारीरिक चोट पहुंचाना। यही कारण है कि इस तरह की हिंसा सभी श्रेणी की औरतों के साथ होती है। चाहे वह महानगर में हो या गांव में या फिर वह कामकाजी हो या घरेलू। अगर कोई महिला कानून की शरण में जाकर अन्याय के खिलाफ खड़े होने का साहस कर भी ले, तो उसके लिए यह संभव नहीं कि वह अपने जीवनसाथी या अन्य परिजनों से भावनात्मक संबंध कायम रख पाए। फिर ऐसे में क्या रास्ता है? क्या महिलाओं के पास सिर्फ दो रास्ते हैं, या तो वे अपनी शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा को नियति मान लें या फिर कानून का दामन थामकर अकेली हो जाएं। परंतु इन दोनों ही स्थितियों में समाज बिखरता है।

महिलाओं के प्रति हो रही हिंसा को रोकने के लिए स्त्री और पुरुष, दोनों की सहभागिता की आवश्यकता है और इसकी शुरुआत परिवार से ही हो सकती है। माता-पिता के रूप में बेटी के अधिकारों का संरक्षण, पति के रूप में पत्नी का सम्मान, बेटे के रूप में माता के प्रति दायित्व का ईमानदार निर्वहन समाज से हिंसा के हर रूप को मिटा सकता है।

(ये लेखिका के अपने विचार हैं)

साइबर संसार

रामलीला में बंदर

बचपन के दिनों में हमारी बड़ी कोशिश होती थी रामलीला में बंदर बनने की। तब हमारा शरीर या रसूख इतना नहीं होता था कि हम हनुमान बनने की सोचें। हां, सपना जरूर था। रामलीला में बंदर बनने के लिए काफी पापड़ बेलने पड़ते थे। सबसे पहले अड़चन घर से ही होती थी। रामलीला रात नौ बजे से शुरू होती थी। बंदर या राक्षस बनने के इच्छुक बच्चों को साढ़े आठ बजे तक रामलीला स्टेज के पीछे मेकअप रूम में पहुंचना पड़ता था। घर वाले हमें साढ़े आठ बजे तक खाना देते ही नहीं थे। पिताजी साढ़े आठ के बाद खाना खाते। रसोई से गरम-गरम रोटी ले जाने की जिम्मेदारी मेरी या मेरे भाई की होती। उसके बाद ही हमें खाना मिलता। हम तो बंदर बनने के लिए रात के खाने की बलि तक देने को तैयार थे। पर मां थीं कि हमें बिना खाना खिलाए जाने नहीं देतीं। ...इन सबके बावजूद हम मेकअप रूम में दाखिल हो जाते थे। पर यहां भी लोचा था। सब बंदर बनना चाहते थे, क्योंकि रामलीला मास्टर की ताकीद होती थी कि मंच पर बंदर ही राक्षसों का संहार करेंगे, यानी युद्ध में राक्षस ही पिटेंगे। कई बार ऐसा भी हुआ कि ज्यादा पिट जाने पर राक्षस को गुस्सा आ गया और उसने मंच की मर्यादा के विपरीत दर्शकों के सामने ही वानर को पीट डाला। ऐसे में, व्यवस्था संभालने वाले मुस्टंडे आकर वानर-राक्षस द्वंद्व को तुरंत मंच के अंदर खींच लेते थे। उसके बाद उनकी पिटाई होती थी। हमारे नसीब में अधिकांशतः राक्षस बनना था और पिटना भी बदा था। वे भी क्या दिन थे!

बंदर बनने के लिए तरकीबें ढूंढ़ने का सिलसिला कब खत्म हुआ याद नहीं, पर बचपन याद है।

लेखक मंच ब्लॉग से

मनसा वाचा कर्मणा

सिद्धांतों से परे

सिद्धांतों के तहत जीने वाले लोग अक्सर ज्यादा दिमागी होते हैं। जीवन के बारे में सोच-सोचकर वे इतने परेशान हो जाते हैं कि उनका हाजमा बिगड़ जाता है। लेकिन सत्य कहीं और ही छिपा होता है, जहां आप खोज रहे हैं, वहां नहीं। एक बार एक गांव में बहस हो रही थी कि मांसाहार अच्छा होता है या शाकाहार। सभी अपने-अपने विचार जोर-शोर से दे रहे थे। तभी एक ज्ञानी वहां पहुंचा, जिसे सभी लोग मानते थे। एक युवक ने उठकर उससे पूछा, 'क्या मैं मांस खा सकता हूं?' ज्ञानी ने उल्टा सवाल पूछा, 'मांस खाते समय तुम्हें कैसा लगता है?' युवक ने कहा, 'बहुत अच्छा तो नहीं लगता।' ज्ञानी ने कहा, 'फिर मत खाना।' तभी दूसरे युवक ने कहा, 'मांस खाते हुए मुझे अच्छा लगता है।' ज्ञानी ने कहा, 'फिर जरूर खाओ।' लोग कुछ समझ नहीं पाए कि यह कहना क्या चाहता है। अचानक मंच पर आसीन ज्ञानी ने हंसना शुरू किया। अब जब आप हंसते हैं, तो अकेले नहीं हंस सकते, आसपास के लोग उसमें शामिल हो जाते हैं। विवाद करने वाले भी हंसने लगे। जैसा कि अक्सर होता है कि हंसने वालों में एक व्यक्ति ऐसा भी होता है, जिसकी हंसी हास्यास्पद होती है। ऐसा व्यक्ति वहां भी था। उसकी हंसी सुनकर ज्ञानी की हंसी के फव्वारे फूटने लगे। फिर क्या था, हंसी का जोरदार विस्फोट उस कमरे में हुआ। उनकी आवाज इतनी बुलंद थी कि राहगीर भी आकर उस हास्य में शामिल होते गए। अब माहौल ऐसा था कि शाकाहारी, मांसाहारी और सभी पंथ व धर्म के लोग ठहाके मार-मारकर हंसने में लग गए। उस हास्य की खनक व ऊर्जा दूर-दूर तक अपनी तरंगें फैला रही थी। लोग अंदर से बाहर तक धुल गए। उस आनंद का न कोई कारण था, न कोई लक्ष्य था। आहार के सभी सिद्धांत उसमें बह गए। ज्ञान व अज्ञान की दीवारें ढह गईं। कोई पूछे, इससे क्या हासिल हुआ, तो यह नहीं बताया जा सकता। हां, इतना कह सकते हैं कि उस दिन किसी का हाजमा नहीं बिगड़ा।

अमृत साधना

मेल बॉक्स

विक्षिप्त राजनीति

जिस तरह से केजरीवाल ने भारत की दो मुख्य पार्टियों के बीच संबंध उजागर किया गया है, वह विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की खामियों को उजागर करता है। भाजपा के अध्यक्ष नितिन गडकरी के खिलाफ खुलासों से यह स्पष्ट है कि ये पार्टियां भ्रष्टाचार में साथ-साथ हैं, जबकि संसद में सत्र के दौरान जब महत्वपूर्ण मुद्दों पर चर्चा की बात आती है तब वे जानी दुश्मन बन जाते हैं और देश के पैसे व समय को बर्बाद करते हैं। उन्हें यह लगता है कि भारत की आम जनता जोकर है, यही वर्तमान भारत की विडंबना है। हम युवाओं को इस समस्या से छुटकारे के लिए कुछ ऐसा करना है कि एक बेहतर भविष्य का निर्माण हो। अब समय आ गया है कि देश को विक्षिप्त राजनीति से मुक्ति मिले।

सृष्टि रंजन
sristi.ranjan@gmail.com

बेनी का बयान

केन्द्रीय इस्पात मंत्री बेनी प्रसाद वर्मा का यह बयान बहुत ही बेतुका है कि खुर्शीद जैसा व्यक्ति 71 लाख रुपये जैसी राशि के लिए कुछ गलत क्यों करेगा। उनके अनुसार 71 करोड़ रुपये होते तो कुछ गंभीर बात होती। वह यह भूल रहे हैं कि हम साधारण लोगों के लिए तो खीरा चोर भी चोर है और हीरा चोर भी चोर है। हमारी नजर में तो चोर का मतलब चोर है चाहे वह कुछ भी चोरी करे। बेनी के बयान से पता लगता है कि 71 लाख रुपये आज के राजनेताओं के हाथ की मैल हो गई है। अजीब बात है, हम जनता दो वक्त की रोटी के लिए दिन भर धूप में अपने को जलाते रहते हैं और हमारे नेताओं की नजर में 71 लाख रुपये की राशि भी कोई मायने नहीं रखती। शायद इसीलिए हमारी दुर्दशा को हमारे नेता समझ नहीं पाते और हम गरीब से और गरीब होते जाते हैं।

अजय विश्वास
भवानीगंज किशनगंज
ajaybiswas4@gmail.com

मौत का बना तमाशा

पिछले कई दिनों से पूरा मधुबनी जिस तरह प्रशांत की मौत की आग में जल रहा था वह बड़े हैरत की बात है। वहीं इन सब के बीच तीन निर्दोषों की जान चली गई जिसका मलाल न तो सत्ता पक्ष को है ना विपक्ष को। ये बातें हम सब को आगाह करती है कि किसी चिंगारी को बिना सोचे-समझे ही इतनी हवा न दो कि वह बाद में ज्वालामुखी का रूप लेकर हमारा ही अपना सब कुछ जला कर राख कर दे। ऐसा नहीं है कि पहली बार इस तरह अफवाहों के कारण लोगों ने अपना विवेक खोया है। अभी हाल ही में अफवाहों के कारण बेंगलुरु से भी उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के लोगों को अपने प्रदेश वापस भागना पड़ा था।

अभिषेक कुमार
kumar.abhishek281@gmail.com

केजरीवाल का प्रयास विफल

रॉबर्ट वाड्रा और सलमान खुर्शीद का पोल खोलकर विश्वसनीयता का जो ताना-बाना केजरीवाल ने बुना था उसके कारण लोगों को बीजेपी के खिलाफ खुलासे के प्रति बड़ी उत्सुकता और धमाके की उम्मीद थी। लेकिन हुआ उल्टा। दरअसल केजरीवाल अब एक राजनीतिक पार्टी के अध्यक्ष हैं जो बीजेपी से या तो विरोधी पक्ष की भूमिका हथियाना चाहते हैं या कांग्रेस की किसी छुपी हुई योजना के तहत काम कर रहे हैं ताकि बीजेपी तख्त पर काबिज न हो पाए। गडकरी के खिलाफ किए खुलासों से केजरीवाल ने अपने पैरों में कुल्हाड़ी मार ली। साख जो बनी थी उसे खो दिया। दरअसल आनन-फानन में संवाददाता सम्मेलन करने की बजाये थोड़ा और समय ले कर अपना होमवर्क पूरा कर लेना चाहिए था। केजरीवाल का यह प्रयास कि कांग्रेस की असफलताओं का, भ्रष्टाचार का लाभ बीजेपी को न मिले, असफल हो गया। उल्टा इस उठापटक से बीजेपी को लाभ होने की उम्मीद ज्यादा हो गई है।

रमेश चन्द्र आनंद
rameshdoon@hotmail.com

साधारण डाक से पत्र भेजने के अलावा आप ईमेल से भी अपनी राय भेज सकते हैं। हमारा पता है- **मेल बॉक्स, हिन्दुस्तान, बुद्ध मार्ग, पटना, 800001,** ईमेल से 'आपकी राय' भेजने के लिए हमारा पता है- **aapkirai@gmail.com**

Printed and distributed by NewspaperDirect
www.newspaperdirect.com US/Can: 1.877.980.4040 Intern.: 800.6364.6364
COPYRIGHT AND PROTECTED BY APPLICABLE LAW